ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
Index Copernicus Value (ICV 2018): 86.20
DOI: 10.5281/zenodo.3585048

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

Arts

काव्य, साहित्य, संगीत एवं लघु चित्रकला का अन्तः - अनुशासनिक संबंध

डॉ. कुमकुम माथुर [1]
[1] प्राध्यापक चित्रकला, शा. कमला राजा कन्या (स्व.), महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

शोध-सारांश
काव्य, संगीत एवं चित्रकला मानव हृदय की रागात्मक वृत्ति की रचना है। संवेदनशील कलाकार मस्तिष्क के साथ साथ स्वच्छ हृदय का भी स्वामी होता है। अतः वह जाने अन्जाने, जैसे भी वातावरण के संपर्क में आता है, उसकी छाया कलाकार के मस्तिष्क पर इतने प्रभावशाली रूप में पड़ती है कि वह अपनी हृदय में उठती भावतरंगों को प्रकट करने हेतु विवश हो जाता है और तब कला का जन्म होता है। शब्द रचना का धनी काव्य के द्वारा, स्वर का धनी संगीत के द्वारा, तथा तूलिका का धनी चित्रकारी द्वारा स्वयं को प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द – कला, मनोविज्ञान, सम्बन्ध

Cite This Article: डॉ. कुमकुम माथुर. (2019). “काव्य, साहित्य, संगीत एवं लघु चित्रकला का अन्तः - अनुशासनिक संबंध.” *International Journal of Research - Granthaalayah*, 7(11SE), 70-74. https://doi.org/10.5281/zenodo.3585048.

भारतीय संगीत की रागपद्धति विश्व संगीत में अद्वितीय मान्य है। रागों की भारतीय अवधारणा में विभिन्न सुरों के साथ, वादन एवं गायन का काल और स्थिति उनसे उत्पन होने वाली भावनाएं और मनोदिशाएँ, उनसे जुड़े वाद्योपकरण और व्युतपन होने वाले रस, सभी राग के अवयव माने जाते हैं। अधिकांश रागों में ऐसी भावनात्मक स्थितियां अन्तर्निहित रहती हैं जो श्रृंगार के किसी न किसी पक्ष, संयोग या विप्रलभ से जुड़ी रहती हैं । 12वीं शती में रचित 'गीत-गोविन्द' में प्रेम के विभिन्न भावों एवं मनोवृत्तियों के साथ रागों और तालों का घनिष्ट सम्बन्ध मिलता है। काव्यों में श्रृंगार का लोकतत्व निभाते हुये जितनी लीलाएं वर्णित हुई, उन सव लीलाओं का निचोड़ है जयदेव रचित गीत गोविन्द कान्हेरी चित्रशैली में रची गयी गीत गोविन्द चित्रमाला कलाओं के परस्पर अंतः अनुशासनिक सम्बन्ध का महत्वपूर्ण उदाहरण है।[1] 1475 ईसबी की गुजराती कल्पसूत्र की एक प्रति में सर्वप्रथम रागमाला के उदाहरण मिलते हैं।[2]

विभिन्न विधाओं तथा विभिन्न कालों में, यथा पूर्व मुगल, परवर्ती मुगल, राजस्थान, पहाड़ी क्षेत्र के चित्रकारों ने लघु चित्रकला में रागों को व्यापक तौर पर अपना चित्र विषय बनाया। अपने प्रतिमानों, प्रतीकों, स्थितियों, रसों तथा अन्य संगत ब्योरों के लिये इन चित्रकारों ने मुख्यतः नारद, हरिवल्लभ, हनुमान तथा मेशकर्न के ग्रंथों का अनुसरण किया है तथा इन ग्रंथकारों से पर्याप्त भिन्न उनके कलात्मक नवाचारों ने संगीत के एक नये मिथक शास्त्र का सृजन कर दिया है। संगीत एवं चित्रकला का एक अनूठा संबंध है। रागो के अमूर्त रूपों में विद्यमान

गेयात्मकता और कल्पनाजन्य संभावनाओं से अनुप्राणित होकर भारतीय चित्रकारों ने उन्हें रूप और रंगों में रूपायित करने और रेखाओं द्वारा उस प्रभाव को अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया है। चित्रकला के साथ संगीत अर्थात दृश्य की अद्वितीय विशेषता है। रागमला, बारहमासा एवं नायिका भेद चित्रण के ऐसे तीन प्रकार है जिनमें यदि राग का नाम अथवा राग से संबंधित पद अंकित न हो तो तीनों में अन्तर करना दुष्कर हो जाता है। भारतीय धर्म दर्शन प्रारंभ से ही ईश्वर की चित्ररूप में परिकल्पना करता रहा है। ईश्वर के भक्तिमय स्वरूप को श्रृंगारिकता का बाना पहनाकर चित्रकार ने 16वीं से 18वीं शताब्दी तक दैनिक जीवन के समस्त पक्षों को उजागर किया है। इस अवधि में काव्य, संगीत एवं चित्रकला तीनों विधाएं साथ-साथ विकसित हुई।[3]

संगीत शास्त्र विदो के अनुसार रागोत्पत्ति का मूल स्त्रोत 'शिव' है। शिव के पांच मुखों से 5 राग तथा गिरिजा (पार्वती) के मुख से एक राग[4] अर्थात, कुल 6 रागों की उत्पत्ति हुई। प्रत्येक राग की 5-6 वधुएं मिलाकर कुछ 36 राग- रागिनियां हुई। इन 36 राग - रागिनियों को 6 ऋतुओं में विभाजित किया गया। 1. बसन्त 2. ग्रीष्म 3. वर्षा 4. शरद 5. हेमन्त तथा 6. शिशिर। इनके 6 उपभेद हुये। इस ऋतुओं के वर्णन अनुसार 'बारहमासा' चित्रांकन किया गया। मुखय 6 ऋतुओं के क्रमानुसार राग हिण्डोल, दीपक, मेघ, भैरव, श्री तथा मालकौस रागों की अवेधारणा की गई। दिन व रात्रि के आठ प्रहरो के आधार पर गायन एवं वादन का समय निश्चित हुआ। कवियों एवं संगीत शास्त्रियों द्वारा वर्णित लक्षणों के अनुसार राग रागिनियों, बारहमासा एवं अष्टयाम चित्राकन सृजित किये गये। कहीं कहीं चित्रकारों ने तत्कालीन राजाओं, निर्देशकों एवं स्वयं के चिन्तन के आधार पर किंचित परिवर्तन भी किया। चित्रकारों ने प्राय रागों को नायक एवं रागिनियों की नायिका के रूप में चित्रांकित किया। राग के स्वरूप एवं लक्षणों के आधार पर नायक - नायिका की अवस्थाओं के अनुरूप नायक-नायिका भेद बताये गये। नायिका भेद भी चित्रकारों का प्रिय विषय रहा।

अधिकांश रागमाला चित्रण राजस्थान, मालवा, बुन्देलखण्ड, बीजापुर, गोलकुण्डा एवं पहाडी चित्रशैलियों में हुआ है। किसी भी देश अथवा किसी भी युग में साहित्य, संगीत एवं कला का इतना सुन्दर समन्वय नहीं हुआ। जैसा कि राजपूत शैली के अन्तर्गत दृष्टिगत होता है। राजपुत शैली के प्रमुख केन्द्र मेवाड़, अम्बर, मारवाड़, बीकानेर, जयपुर, किशनगढ़ एवं कोटा-बूंदी रहे। इन सभी केन्द्रों पर रागमाला, बारहमासा, नायिका भेद, भागवत, रसिकप्रिया, गीत गोविन्द, सूरसागर आदि विषयों पर बहुवायत से चित्रांकन हुआ।[5]

शास्त्रीय ग्रथों के वर्णनानुसार दीपक - राग सम्पूर्ण है। यह राग किसी भी ऋतु अथवा प्रहर में गेय है। दीपक राग का ध्यान बालारतार्थ प्रविलीनदीपे गृहेन्धकारे सुभर्ग प्रवृतः । तस्या शिरोभूषण रत्नदीपेलज्जा दधौ दीपक राग राजः॥ अर्थात जिसने बाला स्त्री के साथ क्रीड़ा हेतु प्रवृत होने पर दीपक बुझाकर अंधकार किया परन्तु जिसकें शिरोभूषण के तेज से उसे लज्जा प्रतीत हुई ऐसा यह दीपक राग है।[6] कोटा लघु चित्र शैली में चित्रांकित 'राग-दीपक' में उपरोक्त ध्यान अनुसार ही सृजन दृष्टिगत होता है। संयोजन में रात्रिबेला में नायक-नायिका प्रणयरत है। नायक - नायिका के दोनों ओर दीपक दृष्टव्य है। महल का आन्तरिक दृश्य है। चित्र के ऊपरी भाग में दीपक राग संबंधी जानकारी दोहे के रूप में लिखित दृष्टव्य है।[7]

'रागमाला' चित्रो ' का आधार नायिका भेद रहा है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र, विश्वनाथ के साहित्य दर्पण, वात्सायन के कामसूत्र एवं संगीतशास्त्र संबंधी विभिन्न पुस्तकों में नायिका भेद वर्णित किया गया है। भरत के नाट्यशास्त्र में अलौकिक एवं लौकिक जातियों के आधार पर, सामाजिक व्यवहार के आधार पर, संयोग और, वियोग की दशानुसार, प्रेम के आधार पर, यौवन के आधार पर एवं गुण के आधार पर नायिका भेद किया गया है। साहित्य आचार्यो ने नायिका के 3 भेद दिये :- स्वकीया, परकीया, एवं सामान्या। इन भेदों के 6 मुखय भेद हैं तथा प्रत्येक की आठ अवस्थाएं हैं। 1. स्वाधीन पतिका 2. वासक सज्जा 3. विरहोत्कांठिता 4. खण्डिता

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
Index Copernicus Value (ICV 2018): 86.20
DOI: 10.5281/zenodo.3585048

5. कल्हान्तरिता 6. विप्रलब्धा 7. प्रोषितप्रिया 8. अभिसारिका।[8] विरहोत्कंठिता नायिका, विरहाग्नि से ग्रसित होकर निर्जन वन में वीना वादन कर अपने ह्रदय की पीड़ा को प्रकृति के समक्ष प्रस्तुत करती है। संयोजन में निर्जन प्रदेश में कमल पंखुड़ियों पर आसीन नायिका को वीणा वादन करते चित्रांकित किया है। अलंकारिक प्रकृति के मध्य उदासीन नायिका विरहाकुल प्रतीत होती है।[9]

नायिका भेद के अतिरिक्त बारहमासा अर्थात विभिन्न ऋतुओं का चित्रण भारतीय लघु चित्र शैलियों में किया गया है। केशवदास की रसिक प्रिया।[10] के प्रभाव से निर्मित कृतियों में नायक-नायिका राधा कृष्ण के रूप में चित्रित हुये। बसंत ऋतु के दृश्य संयोजन में प्रायः कृष्ण को गोपियों के साथ दर्शाया गया है। प्राकृतिक वातावरण में पुष्पाच्छित वृक्ष वल्लरियों को मयूर पक्षियों, वृक्षो पर कलरव करते, नदी में तैरते हुये सारस, बतख् इत्यादि को चित्रांकित किया गया है। संयोजन में आम कलश, लिये, नृत्यरत गतिपूर्ण मुद्रा में श्री कृष्ण दर्शित हैं। ढोलक मंझीरे, बाँसुरी, ढपली आदि वाद्यों का वादन करती गोपियाँ, कृष्ण के साथ गतिपूर्ण नृत्य मुद्रा में दर्शित है। लाल, पीले एवं नीले रंगो का आकर्षण प्रयोग किया गया है।[11]

भारत में महाकाव्य के रूप में पूजित रामायण धार्मिक ग्रंथों में श्रेष्ठ माना जाता है। राम की कथा का काव्य रूप रामायण में प्रस्तुत है। वाल्मिकी की रामायण एवं तुलसी के रामचरितमानस का स्थान हिन्दी साहित्य में ही नहीं वरन् सम्पूर्ण जगत के साहित्य में निराला है। उत्तम काव्य के लक्षणों से युक्त, काव्य कला की दृष्टि से उच्च कोटी का, सदैव कवियों, गायकों एवं चित्रकारों के आकर्षण का केन्द्र रहा। भारतीय लघु चित्रकला में रामकथा को प्रमुख स्थान मिला। राम चरित्रमानस में दोहे एवं चोपाइयों द्वारा 'राम' के चरित्र को जीवन्त किया है। रामचरित मानस की चौपाई - दैहिक, दैविक भौतिक तापा। रामराज नहीं काहुहि व्यापा॥ सब नर करहि परस्पर प्रीति। चलहि स्वधर्म निरत श्रुति नीति॥ । 1। भावार्थ - रामराज में दैहिक, दैविक एवं भौतिक ताप किसी को नहीं व्यापते। सब मनुष्य परस्पर प्रेम करते हैं ओर वेदों में बताई हुई नीति (मर्यादा) में तत्पर रहकर अपने-अपने धर्म का पालन करते है।[12] उक्त चौपायी पर आधारित चित्रण 1800 ई में राधोगढ़ (मध्यभारत) लघु चित्रशैली के अन्तर्गत किया गया है। संयोजन में श्री रामसीता राजसी वेशभूषा में प्रसन्न मुद्रा में शैया पर आसीन हैं। चहुं ओर प्राकृतिक छटा अलंकारिक रूप में दर्शित है। एक ओर विनत भाव किये करबद्ध मुद्रा में श्री हनुमान तथा दूसरी ओर चॉवर डुलाते सेवारत लक्ष्मण दर्शित हैं। संयोजन में सारस पक्षी कलरव करते चित्रांकित है।[13]

पण्डित द्वारका प्रसाद मिश्र की अमर रचना कृष्णायन में श्री कृष्ण का सम्पूर्ण चरित्र पदबद्ध काव्य रूप में प्रस्तुत किया गया है। कृष्णायन की भाषा अवधि है। रीतिकालीन काव्य ग्रंथों से सर्वथा भिन्न यह उच्च कोटी की काव्य रचना है। जिसमें भावों, रसों आदि का अतिउत्तम प्रस्तुतिकरण है। कृष्णायन में प्रस्तुत दोहा :- विहंसत हरि हेरत प्रियहि, लास- रसीले नैन। अघर मधुर बरसे बहुरि, सुधासिक्त मृदु बैन ॥ 159 ॥ भावार्थ - कृष्ण मुस्कुराते हुये राधा को लास (नृत्य) के कारण रसीले नेत्रों से अर्थात प्रेमभाव से निहार रहे हैं। इसी समय हरि के मीठे अधरों से अमृत से भीगे कोमल बचन बरस पड़े अर्थात राधा को प्रेम से देखने के बाद हरि उनसे कुछ प्रिय वचन कहे।[14] इस संदर्भ से साम्यता रखते लघु चित्र में राधा एवं कृष्ण छत पर तख़तनुमा शैया पर आसीन है। राधाकृष्ण परस्पर मोहित दृष्टि से अपलक निहारते वार्तारत दर्शित है। श्री कृष्ण के एक हाथ में पान का बीड़ा है तथा दूसरे हाथ से वे राधा को पान खिलाते द्रष्टव्य है।[15] चित्रकार ने कृष्णायन में वर्णित प्रसंग को अत्यन्त सजीवता से अंकित किया है।

भारतीय लघु चित्र शैलीयों की परम्परा अनुशासनात्मक रूप से हो पुष्पित पल्लवित हुईं। चित्रकारों ने लघु-चित्रों में स्थानीय विशिष्ठताओं को काव्य, साहित्यक ग्रंथो, पुराणों आदि में वर्णित प्रसंगों को चित्रांकित करके

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
Index Copernicus Value (ICV 2018): 86.20
DOI: 10.5281/zenodo.3585048

अद्भुत कार्य प्रस्तुत किया। कवि कालीदास ने कुमार संभव के प्रथम सर्ग में लिखा है कि जिस प्रकार कूची (ब्रश/तूलिका) से उचित ढंग़ से उपयुक्त स्थानों पर रंग भरने से चित्र की आभा निखर उठती है, उसी प्रकार पार्वती जी का शरीर भी नवयौवन का संसर्ग पाकर खिल उठा :- उन्मीलितम तूलिकायेव चित्र सूर्याशुभिभिन्न निवारबिंद वभूब तस्याचतु स्त्रशोभी वपुविभक्तं नवयौवनेन अर्थात एक ओर कवि की लेखनी ने चित्रकार की तूलिका से प्रेरणा प्राप्त की ओर दूसरी ओर चित्रकार की तूलिका ने कवि भी लेखनी से दिशायें ग्रहण की।16 अतः भारतीय दृष्टि से कवि, साहित्यकार, संगीतकार एवं चित्रकारों के मध्य अन्तः अनुशासनिक सम्बंध सदैव विद्यमान रहा तथा यह सदा चिरस्थायी रहेगा।

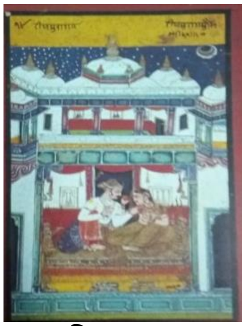
चित्र क्र.1

चित्र क्र.2

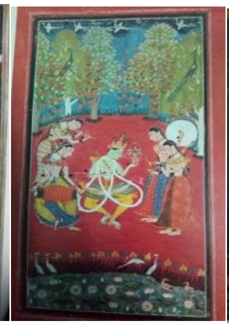
चित्र क्र.3

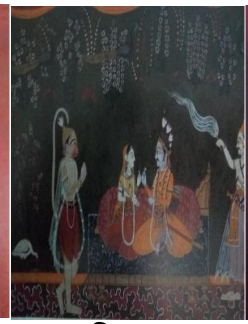
चित्र क्र.4

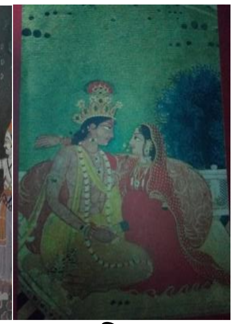
चित्र क्र.5

संदर्भ

[1] उपाध्याय नर्मदा प्रसाद, भारतीय चित्रांकन परम्परा, प्रथम संस्करण 2003, पृ. क्र. 29
[2] एबिलिंग क्लॉस, रागमाला पेण्टिग, प्रकाशक, रवि कुमार, 1972, पृ. क्र. 30-32.
[3] पाठक, डॉ. सुनंदा, हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति में राग की उत्पत्ति एवं विकास, प्रथम सस्कंरण वर्ष 1989 पृ. 32.
[4] शिवशक्ति समायोगाद्रागाणां सम्भवों भवेत पन्चास्यात, पन्चरागाः स्युषष्ठस्तु गिरिजा मुखात्। संगीत दर्पण, दामोदर, 1625, पृ. 478.
[5] मुकर्जी राधाकमल, भारत की संस्कृति और कला, दिल्ली 1959, पृ.क्र. 306-307
[6] द्विवेदी हरिहर निवास, तानसेन, जीवनी व्यक्तित्व तथा कृतित्व, प्रथम संस्करण 1986, पृ. 218
[7] कृपया देखे चित्र क्रमांक 01 कोटा बूंदी शैली 1750-1770 मध्य भारत (साभार, इण्डियन मिनियेचर, फ्रांसिस बूनेल, पृ. क्र. 25)
[8] भरत का नाद्यशास्त्र, अध्याय 34 (द्रष्टव्य - वर्मा अविनाश बहादुर, भारतीय चित्रकला का इतिहास, चतुर्थ संस्करण 1980, पृ. क्र 248.)
[9] कृपया देखें चित्र क्रमांक 02, विरहोत्कंठिता नायिका, दक्षिण शैली, 17 ए.डी. (साभार ललित कला अकादमी, मिनियेचर पेटिंग पृ.क्र 63)
[10] केशवदास द्वारा रचित रसिकप्रिया एक श्रृंगारिक ग्रंथ है। जिसका रचनाकाल 1493 मान्य है।
[11] कृपया देखें चित्र क्र 03 रागिनी बसंत, राधा कृष्ण, (साभार पॉल प्रतापदित्य, क्लासिकल ट्रेडीशन इन राजपूत पेटिंग, प्लेट .12)
[12] टीकाकार पोद्धार हनुमान प्रसाद, श्री रामचरित मानस, 2016, ग्यारहवा संस्करण, पृ.क्र. 892.
[13] कृपया देखें चित्र क्र 04, रामदरबार, राधोगढ़ (मध्यभारत) 18वीं शताब्दी, (साभार पोर्टफोलियो, रामायण, प्रकाशक नेशनक म्यूजियम.

[14] शर्मा विनयमोहन (टीकाकार) कृष्णायन, पण्डित द्वारका प्रसाद मिश्रा, प्रथम संस्करण, 1984, पृ. क्र. 137.
[15] कृपया देखे चित्र क्र. 05 राधा कृष्ण लघु चित्र निजी संग्रह (साभार - इण्डियन मिनियेचर, बूनेल फ्रांसिस, पृ.क्र.94) .
[16] गैरोला वाचस्पति, भारतीय चित्रकला, प्रथम संस्करण, 1963, पृ. क्र. 32. (कुमकुम माथुर)